नारी चेतना नयी दिशा की ओर

डॉ॰ मिनी ए आर

असिस्टेंट प्रोफेसर

हिन्दी विभाग

पय्यानूर कॉलेज

ar.manasa.mini@gmail.com

फोन - 9496466656

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय नारी की चेतना के प्रवाह में नये आयाम आने लगे। पहले वह गुलामी की जंजीरों में जकड़ी हुई थी, इनको मुक्त कराना आवश्यक था। “स्त्रियाँ समाज का अनावश्यक हिस्सा नहीं है। बल्कि पुरुषों की तरह समाज के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए उतनी ही अनिवार्य है।”[1] आज़ादी के बाद बने भारतीय संविधान और उसमें होते रहे संशोधनों में इस तथ्य का अनुभव किया जाता रहा है कि महिलाओं की भागीदारी सार्वजनिक क्षेत्रों में बढ़ाना आवश्यक है। लेकिन स्वतंत्रता के बाद भी इसको पूरी तरह सफलता नहीं मिली।

एक दलित, वंचनीय नारी की अंतर्लीन व्यथा का मार्मिक चित्रण करना और उसे दूसरों के समक्ष दिखआना एक नारी ही कर सकती है। नारी के अनुभूत सत्य को नारी ही पहचान सकती हैं। इसी पहचान के कारण उनके नारी संबंधी लेखन में यथार्थ अधिक मात्रा में भरा हुआ है। स्त्री नियति से जुडे जीवन यथार्थ को सिर्फ नारी ही भोगती है अतः इस स्वानुभूत सच्चाई की अभिव्यक्ति में अप्रतिम विश्वसनीयता विद्यमान होती है। महिला लेखिका श्रीमती मृणाल पाण्डेय ने इस सत्य को यों शब्द बद्ध किया- “लेखन सिर्फ उसके लिए स्व-अनुभूत को सामने लाने का ही नहीं, अपनी निजी और जातीय पहचान को टटोलने का भी बनता चला गया है।”[2] नारी जीवन की समस्याओं को जितना सफलतापूर्वक नारी लेखिकाएँ कर सकती है, उतना शायद अन्य कोई नहीं।

वर्तमान समाज में भारतीय नारी के अस्तित्व पर विचार करने से पूर्व यह आवश्यक है कि उसके परंपरागत स्वरूप और आज के बदलते परिस्थितियों पर विचार करना। प्रागैतिहासिक काल के मातृ सत्तात्मक समाज में नारी की स्थिति पुरुष के बराबर ही नहीं, उससे श्रेष्ठ थी। वैदिक युग में भी स्त्रियों की स्थिति श्रेष्ठ मानी जाती थी। “स्त्रियों को अलग या परदे में नहीं रखा जाता था। वह विज्ञान एवं सुसंकृत थी। वैदिक युग में सती की प्रथा अज्ञात थी।”[3] ब्राह्मण काल में नारी को धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में पूर्ण आज़ादी थी, लेकिन वर्ण व्यवस्था के नियम ज्यों-ज्यों कड़े होते गए, स्त्रियों की स्थिति में भी गिरावट आने लगी। महाकाव्य काल में बहुपत्नीत्व की प्रथा ज़ोरों पर थी जिससे उपभोग की वस्तु बवायी जाने लगी। किंतु बौद्ध काल के दौरान स्त्रियों की गिरती स्थिति में कुछ बदलाव देखने में आए। “जो नारी कन्या रूप में माता-पिता पर भार थी, पत्नी रूप में गृह की यंत्रणाओं में दबी रहती थी, उसे उनमुक्त वातावरण में पुरुषों के समान ही जीवन और जगत की समस्याओं का समाधान करने का अव,र मिला।”[4] लेकिन स्त्रियों का यह सम्मान जनक स्वरूप ज्यादा समय तक नहीं रह पाया। आगे स्मृति युग में नारी को बहुत कष्टकर ढंग से उनक् अस्तित्व और स्वतंत्रता में हानी झेलनी पड़ी। मध्यकाल में भारत में मुसलमानों के आक्रमण और आगमन हुआ तो स्त्रियों की स्थिति में बहुत अधिक गिरावट आयी। “उसकी प्रायः न समाज में कोई प्रतिष्ठा थी और न ही उसके अपने विचारों में। अतः शिक्षा का अभाव, बाल विवाह, अकेलापन, पर्दा और सती प्रथा से उसकी घर एवं समाज की सामान्य स्थिति में बहुत बडा ह्रास हुआ।”[5] यही नारी के कल के रूप है।

आज नारी पुरुष के साथ कदम मिलाकर हर एक क्षेत्र में अपने अस्तित्व को प्रमाणित कर रही है। उन्होंने जीवन के लगभग हर क्षेत्र में अपनी प्रतिमा का प्रदर्शन कर यह एहसास करा दिया है कि किसी भी दृष्टि से नारी पुरुषों से कम नहीं होती। आधुनिक परिस्थितियों ने स्त्री को अत्याचार के विरूद्ध आवाज़ उठाने की शक्ति दी। नारी पुरुष के लिए रथ के पहिए के समान है। सृष्टि के प्रारंभ दिनों से ही स्त्री और पुरुष जुटा हुआ है। दोनों रेल की पटरी के समान समानांतर न होना चाहिए था बल्कि दोनों मिल जुलकर एक होना अवश्य है। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल का मत है कि- "नर और नारी देखने में दो लगते है, किंतु वे एक ही मूल तत्व के दो रूप है।"[6] वर्तमान नारी बोध ने स्त्री को अपनी व्यक्तित्व पहचान विकसित करने तथा बच्चों को पालने, खाना बनाने से बढ़कर बड़े-बड़े कार्य के लिए बढ़ाने को प्रेरित किया है।

आज की नारी अपने कैरियर के प्रति अधिक सजग है। अपने कैरियर के प्रति निरंतर सतर्क रहने के कारण वह विवाह, दांपत्य, संतान, मातृत्व और घर-परिवार के प्रति पूरी तरह प्रतिबद्धता नहीं दिखाती। कैरियर बनाने की चाह ने इन्हें नगरों, महानगरों की ओर आकर्षित किया है। रोज़ी-रोटी की तलाश में पहले गाँवों की स्त्रियाँ कृषि कार्यों में लग जाती था, अब वे छोटे-बड़े उद्योगों में लग जाती है। शहर की महिलाएँ घर से बाहर निकलकर कारखानों-दफ्तरों में तथा निम्न वर्गीय स्त्रियाँ दूसरों के घरों में काम करती है। परंतु आज भी यह एक नग्न सत्य है कि नारी उत्थान के साख पुरुष की स्वार्थपरता के कारण स्त्री के स्वातंत्र्य में क्षीणता आ गयी है। पुरुष ने स्त्री को घर की चार-दीवारी में कैद कर ल्या। नारी की दासता उत्तर वैदिककाल से शुरु हुई थी। महाभारत की यह सूक्ति "अर्द्ध भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतम सखा" कितना अर्थवान है। पुरुष सदैव सीता जैसी पतिव्रता पत्नी की चाह करता है, लेकिन स्वयं वह मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम बनने को तैयार नहीं होता, क्योंकि उनकी दृष्टि में नारी समाज की एक कमज़ोर इकाई है, जिसे पुरुष अपने इच्छानुसार नियंत्रण में ला सकता है। निम्न वर्ग की स्त्रियाँ अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के प्रति आवाज नहीं करती थी क्योंकि उन्हें डर था कि यदि इस प्रकार किये तो समाज से वे निष्कासित की जाती। दार्शनिक रेसलजी ने इस पर टिप्पणी लिखी है कि "समाज में कड़ी मेहनत का बोझ स्त्री पर ही लाद किया जाता है, यह इसलिए नहीं कि कड़ी मेहनत के लिए वह अधिक योग्य है, परंतु इसलिए कि उसके विरुद्ध आवाज उठाने की शक्ति उसमें नहीं है। इतिहास ने यह सिद्ध किया है कि हमेशा अधिकार शक्ति संपन्न वर्गों में होता है और कमज़ोर वर्ग हर वक्त अन्याय का शिकार बनकर विडंबनापूर्ण जीवन बिताता है।"[7]

स्वतंत्रता प्राप्ति भारत के इतिहास में गुणात्मक परिवर्तन है। इससे भारत के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक और साहित्यिक स्थिति में बदलाव हुआ। इसके परिणामस्वरूप नारी के विविध रूपों में भी परिवर्तन आया। पहले शिक्षा के क्षेत्र में स्त्री ऐर पुरुष अलग-अलग थे, बाद में यह हुआ कि नर-नारी भेद समाप्त हो गया। पहले घर की चारदीवारी में बंद रहनेवाली स्त्री आज पुरुष के साथ हर क्षेत्र में आगे बढ़ी, फिर बी ध्यान देने की बात है कि "पुरुष की दृष्टि ने जहाँ एक ओर स्त्री को पवित्र देव मंदिर की अधिष्ठात्री के रूप में स्थान दिया वही दूसरी ओर उसे गृह के मालकिन ने बंदिनी बनायी है।"[8] इसलिए स्त्रियों को अपना बहुत सा समय पति के अहंपूर्ण सुख की तृप्ति में बीतना पड़ा। गाँधीजी भी स्त्री को त्याग की मूर्ति कहते है। नारी ममता की प्रतिमूर्ति है। दया, माया ममता जैसी प्रेम का सहस्त्र लहरें उनके विशाम ह्रदय सागर में हिलोरों लेती रहती है। यही माया, ममता जैसे कोमल सुकुमार भावनाएँ नारी को दुर्बल भी बनाती है। गुणात्मक परिवर्तन के कारण "भारतीय स्त्री भी एक दिन विद्रोह कर ही उठी। उसने भी पुरुष के प्रभुत्व का कारण अपनी कोमल भावनाओं को समझा और उन्हीं को परिवर्तित करने का प्रयत्न किया। अनेक सामाजिक रूढियों और परंपरागत संस्कारों के कारण उसे पश्चिमी स्त्री के समान न सुविधाएँ मिली, और न सुयोग, परंतु उसने उन्हीं को अपना मार्ग दर्शक बनाना निश्चित किया।"[9] महादेवी का यह कथन आज के वर्तमान समाज में पूर्णतः सही निकला।

नयी सदी के प्रारंभ में महिलाओं के विकास तथा उन्हें अधिकार संपन्न बनाने के क्षेत्र में कुछ कदम उठाये गए हैं। भारत का स्वतंत्रता आंदोलन को नव उल्लास और नयी जागृति देने में अतीव सहायक सिद्ध हुआ है। स्वाधीनता आंदोलन ने युग-युगों से पीडित नारी के जीवन में जागरण का संदेश भेजा, फलस्वरूप चिर संतप्त स्त्री ह्रदय में नव जागरण की चिनगारी धधक उठी और वह सदियों से उन्हें आबद्ध की रही सामाजिक रूढियों की श्रृंखलाओं से बच जाने का भरसक प्रयास करने लगी। तत्कालीन परिवेश से प्रेरण पाकर नारी का स्वाभिमान एक नयी दिशा की ओर सक्रिय रहा।

भारतीय समाज नारी की प्रस्थिति के संबंध में लिखा है कि "भारतीय राज्य तंत्र पुरुषों और स्त्रियों के बीच अधिकारों की समानता की मान्यता देता है, परंतु निर्विवाद रूप से स्त्रियों की भूमिकाओं और क्रियाओं के क्षेत्र में स्पष्ट भेद को स्वीकार करता है।

वास्तविक स्वाधीनता तो तभी संभव है, जब जनता अपने मत से संविधानगत समानता के अर्थों को स्वीकार करें, स्त्री को मुख्य रूप से घर स् संबंधित माना जाय। उससे गृहकार्य की देख-रेख की आशा की दाती है तथा गृहिणी और माता की भूमिका ही उसकी विशिष्ट भूमिका मानी जाती है। जनता के सांस्कृतिक बोध में बच्चों का उत्पादन और पालन पोषण जैसे गृह-निर्वाह के कार्यों को स्त्रीत्व से संबंध माना जाता है।"[10]

स्त्रियाँ आत्मनिर्भर बनने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है तभी वह पुरुष की दासता से मुक्त हो सकती है और समाज में अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित कर सकती है। प्राचीन भारत में महिलाएँ सभी क्षेत्र में स्वतंत्र थी। नारी को गृहलक्ष्मी रूप में अत्यधिक आदर किया जाता था। उन्हें पुरुष के साथ शिक्षा के द्वार खुले थे। पुरुषों के समान दर्जा भी प्राप्त था। यह स्थिति उपनिषद काल में भी जारी रही। गरीबी का उन्मूलन करने और लोगों को सांस्कृतिक, सामाजिक औरराजनीतिक जीवन में सुधार लाने का सब से शक्तिशाली साधन्न शिक्षा है। शिक्षा के माध्यम से यह अपेक्षा की जाती है कि सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ स्त्रियों की हिस्सेदारी को बढ़ाने के लिए समाज में उनके अधिकारों से संबंधित वैज्ञानिक जानकारी और साक्षरता में बढ़ोत्तरी हो। नारी शिक्षा इस बात को सुनिश्चित करने में भी सहायक होगी और स्त्रियों सक्षम भी बनायोगी कि उनके प्रति हिंसा करनेवालों के विरुद्ध सरल कार्यवाही की जाओ। प्रायः महिलाएँ इस बात से अनभिज्ञ है कि उन्हें कानूनी सहायता उपलब्ध है। साक्षरता और शिक्षा उनके अधिकारों के संबंध में उन्हें जागरूक बनायेगी।

आधुनिक शिक्षा और पाश्चात्य प्रभाव के कारण आधुनिक शिक्षित नारी पुरुष की गुलामी को किसी भी हद तक स्वीकार करने को तैयार नहीं है। "पाश्चात्य जगत में जन्में हुए उदार विचारों कायह परिणाम हुआ कि नारी अपनी स्वाधीनता के लिए संघर्ष करने लगी। नारी के जागते ही पुरुष इस ग्लानी से भर गया कि संपूर्ण इतिहास में नारी पर वह अत्याचार ही करता आया है। स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ आर्थिक स्माधीनता है। नारी जब तक यह स्वादीनता नहीं प्राप्त करती उसका यह दावा झूठ है कि वह स्वतंत्र है किंतु पुरुष यह नहीं चाहता कि नारी आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र हो।"[11] आज की महिलाओं ने शिक्षा, राजनीति, पुलिस, सेना, व्यवसाय, विज्ञान, खेलकूद आदि सभी क्षेत्रों में पुरुष से भी अधिक योग्यता पायी है। उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा उनकी राजनीतिक, प्रशासनिक, लेखकीय, सामाजिक एवं गार्हस्थिक क्षमता अक्षुण्य ही नहीं दिन प्रति विवर्धमान है। झाँसी की रानी व दुर्गावती की परंपरा ने तारकेश्वरी सिन्हा, भण्डारनायके, नंदिनी, सतपथी, इंदिरा गाँधी का रूप लिया है। वही लोपामुद्रा एवं गार्गी की परंपरा ने सुभद्राकुमारी चौहान, महादेवी वर्मा आदि से लेकर आज तक की अनेक महिला लेखिकाओं का रूप धारण कर लिया है।

आधुनिक शिक्षित नारी आत्मनिर्भर हो जाती है, और आर्थिक रूप से स्वतंत्र भी। नारी कभी अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग भी करती है। शिक्षा-व्यवस्था हमारे सामाजिक दृष्टिकोण में कोई खास सुधार या बदलाव नहीं ला पायी है। हालांकि कुछ हद तक पुरुषों तथा महिलाओं के सोच में खुलापन, संतुलन और महिलाओं को समानता का दर्जा देने की दृष्टि विकसित हुई है। परंतु कुलमिलाकर अभी अधिकतर शक्षित और अशिक्षित दोनों तरह के लोग सही सोच और आचरण से वंचित है। अनेक शिक्षित नारियाँ जो विवाहित भी पर-पुरुष से संबंध जोडती है। वे ऐसा संबंध बुरा नहीं मानती यहाँ शिक्षा प्रभावहीन है, और जनसंचार आग भडकाने में घी का काम रहे हैं। नारी की ऐसी प्रवृत्तियों के कारण कितने ही बच्चे माँ की ममता से वंचित रह जाते है, और कितने पुरुष ऐसी पत्नियों की ओर से उदासीन होकर पर-स्त्रियों के पास जाते है। स्वतंत्र भारत की नारी एक ओर पूर्ण रूप से स्वतंत्र है तो दूसरी ओर नहीं। वे समुदाय विकास के उच्च शिखर पर है। लेकिन स्त्री-पुरुष समानता का सपना अभी भी अधूरा है। "लेकिन आज नारी के साथ शिक्षा चेतना तथा समाज के संवेदनशील एवं सजग पुरुष तथा संगठन भी खडे है, अतः उसे अपने अधिकारों की लडाई को ओर तेज करना होगा"।[12] स्वतंत्र भारत की नारी को लेकर सुशील मीतल की उक्ति बिलकुल सार्थक है।"[13]

संदर्भ सूची

1. "Women are not dispensable parts of society, but are as essential. As men for the very existence of society." Dr. Amitabh Mukharjee – Women in Indian life and society. First edition 1996, P.275

ISSN : 2583-2948

2. मृणाल पाण्डेय – इंडिया टुडे – साहित्य वार्षिकी, पृ.24
3. "Women were not secluded or veiled. They were learned and sati was unknown in the vedic period." Premalata Myste Saints of India 5, Swami Dayananda Saraswathi, First edition 1990-P.10,11
4. सरला दुआ- आधुनिक हिंदी साहित्य में नारी, पृ. 83. सं. 1968
5. "She had almost no status in society and none in her own estimation. Thus lack of education, child marriage polygamy, seclusion pardah and the practice of Sati brought about a tremendous deterioration in her position at home and in society in general. B. Suguna working women and religion-P.26, 1994
6. वासुदेव शरण अग्रवाल- वागधारा पृ.55
7. In almost all present communities the hard word is left to woman, not because they are more fit to do it them man, because they have less muscle and are therefore less fit. Through out past history power has been used to give to the satrong an andue share of good things and to leave to the weak a life of toil and misery, Bert and Russel-Humau Society in Ethics and Politics-P.156
8. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, पृ. 11
9. वही, पृ.45
10. भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद् द्वारा राष्ट्रीय रिपोर्ट(1971-74) (भारतीय समाज में स्त्रियों की प्रस्थिति)
11. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 631
12. ओमराज सिंह, नारी कितनी जीती कितनी हारी, पृ.118
13. "The hand that rocks the eradle rubs the word" सुशीला मीतल आधुनिक हिंदी कहानी में नारी की भूमिका पृ.81,82